RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-1, दिसम्बर 2024 जनवरी फरवरी 2025

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18 | अंक - 1 | दिसम्बर-2024, जनवरी-फरवरी-2025

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** – पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** – प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** – प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** – पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** – पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** – सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** – पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** – आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** – पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक)   संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

मीमांसीय संदर्भ में आचार चिंतन की वैचारिकता

आराधना माहेश्वरी
सहायक आचार्य (समाज विज्ञान विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

आज का मनुष्य आधुनिकता की दौड़ में आँखें मूँदकर भाग रहा है। यह आधुनिकता वास्तव में नवीनता नहीं लाती, बल्कि इसके स्थान पर जीवन में अनेक जटिलताएँ, संस्कारहीनता और आचारहीनता का उदय करती है। इसका परिणाम यह हुआ कि व्यक्ति का जीवन असंतुलित और असामान्य हो गया है, और मानसिक तथा शारीरिक रोगों की बढ़ती संख्या ने मानव जीवन को प्रभावित किया है। पश्चिमी संस्कृति, विशेष रूप से विकसित देशों में, इस असंतुलन की स्पष्ट झलक देती है।

इसके विपरीत, हमारे पूर्वजों और ऋषि-मुनियों ने सहस्त्राब्दियों तक चिंतन, अनुभव और व्यवहार की कसौटी पर जीवन को संतुलित बनाने का प्रयास किया। इसका आधार सद्-आचरण है। मानव का अस्तित्व उसके आचरण से अभिन्न है; बिना आचार के जीवन संभव नहीं। भारतीय संदर्भ में आचार ही धर्म का पर्याय है, और इसे मानव जीवन के अभ्युदय का आधार माना गया है। धर्म और नीति के संबंध में विद्वानों की विभिन्न दृष्टियाँ हैं—कुछ इसे समान मानते हैं, कुछ अलग; कुछ धर्म को भावनाओं से मुक्त नैतिकता मानते हैं, जबकि अन्य इसे नैतिकता का अंतिम लक्ष्य मानते हैं। परंतु यह स्पष्ट है कि धर्म सर्वोच्च मूल्य है, क्योंकि यह मानव जीवन में आचार और नैतिकता को स्पष्ट रूप देता है।

भारतीय परंपरा में आचार का अर्थ केवल व्यवहार नहीं है, बल्कि चरित्र, शील और विचार से जुड़ा है। पाणिनी और आचार्य हेमचन्द्र के अनुसार आचार से योग्यता और विचार से दृढ़ता प्राप्त होती है। बौद्ध दर्शन में शील को आचार का रूप माना गया है। समाज में सदाचार की स्थापना को विशेष महत्व दिया गया है, क्योंकि आचार सामाजिक दृष्टि से नैतिकता का मार्ग प्रशस्त करता है। इस प्रकार, आचार चिंतन भारतीय वैचारिकता में न केवल व्यक्तिगत जीवन का आधार है, बल्कि सामाजिक और नैतिक जीवन की नींव भी है।

डॉ. राधाकृष्णन् के मतानुसार मनुष्य अपने कर्मों का स्वयं उत्तरदायी है। उसके दुष्कर्म उसके स्वतंत्र निर्णय और क्रियाओं का परिणाम हैं, और यदि वह दुष्कर्म से नाता नहीं तोड़ेगा तो मुक्ति संभव नहीं है। आचार की नियत परिभाषा में कर्तव्य, कर्तव्य का क्षेत्र और कर्तव्य का उचित पालन सम्मिलित है। कर्म के अन्तर्गत मनसा, वाचा और कर्मणा में शुभता का लक्ष्य रखा जाता है। केवल उचित और नैतिक कर्म ही मानव को नैतिकता और आत्मिक उत्कर्ष की ओर ले जाते हैं।

विश्व में आज कर्म के औचित्य और अनौचित्य की विवेचना व्यापक रूप से हो रही है। इस कारण धर्म का व्यवहारिक रूप अब जीवन का लक्ष्य और समाज के औचित्य को स्पष्ट करने वाला माना जाता

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

है। समाज का आधार व्यक्ति है, और व्यक्ति की महानता उसकी सोच शक्ति में निहित है, जो उसे उच्च मूल्य और नैतिकता की ओर उन्मुख करती है। भारतीय संदर्भ में आचार चिन्तन का मूल उद्देश्य दु:ख की निवृत्ति और आध्यात्मिक जीवन की प्राप्ति है। जब मानव अपने जीवन में गर्व और उद्देश्य का अनुभव करता है, तब वह धार्मिक और नैतिक उत्साह से प्रेरित होकर अपने अस्तित्व और मूल प्रश्न– 'मैं कौन हूँ? मेरा मूल क्या है? मेरी भव्यता क्या है? '–का उत्तर खोजने लगता है। ये प्रश्न जीवन के शाश्वत रहस्य हैं, जिनका दर्शन उपनिषदों में गार्गी और याज्ञवलक्य के संवाद में मिलता है।

महाभारत में सदाचार का महत्व स्पष्ट किया गया है–सदाचार से ही मानव आयु, संपत्ति, कीर्ति और कल्याण प्राप्त करता है। सच्चरित्र और नैतिक व्यवहार श्रेष्ठ पुरुषों की पहचान हैं। यही सदाचार और धर्म का लक्षण है। इस प्रकार, आचार चिंतन मानव के नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक जीवन का आधार है।

भारतीय चिंतन की आधारशिला आचरण पर अवलम्बित है। कर्म अपने आप में मुक्ति प्रदान नहीं करता, बल्कि यह मन को निर्मल और प्रेरित करता है, बशर्ते उसमें आलोकिता, अर्थात नैतिक और ज्ञानसम्पन्न तत्व मौजूद हों। यही नैतिकता मानव के आचरण को प्रज्ज्वलित करती है और जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाती है। मानव जीवन कार्यात्मक और विकासशील है, और विशेषकर नैतिक जीवन के संदर्भ में यह सत्य है कि जो लक्ष्य अभी प्राप्त नहीं हुआ है, उसके लिए मानव सदा प्रयासशील रहता है।

नैतिक प्रक्रिया में शिक्षा, विवेकशीलता और प्रथम सत की प्राप्ति जैसे तत्व मानव के अभीष्ट लक्ष्य को स्पष्ट करते हैं। यही मानव का उच्चतम आदर्श है। भारतीय दृष्टि में जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य या अंतिम गन्तव्य ब्रह्मज्ञान है, क्योंकि यह शाश्वत, अविनाशी और पूर्णत: ज्ञान तथा मुक्ति स्वरूप है। ब्रह्मज्ञान ही मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक और अंतिम उत्कर्ष का स्रोत है।

नि:संदेह, नैतिकता का अंतिम मापदंड आत्म-साक्षात्कार है। यह इतना व्यापक और गंभीर मापदंड है कि इसके द्वारा व्यक्ति अपने दैनिक कार्यों का नैतिक मूल्यांकन सहजता से कर सकता है। आचार्य शंकर ने इस दृष्टि को स्वीकार करते हुए कहा है कि नैतिकता का मूल्यांकन करने का सबसे सुलभ और ठोस उपाय नैतिक आचरण है।

मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में आदर्शों और कर्तव्यों का ज्ञान उसे विद्यार्थी जीवन में दी गई शिक्षा और प्रशिक्षण से प्राप्त होता है। समाज में मानव का विकास उन्हीं मूल्यों के माध्यम से होता है, जिन्हें समाज स्वीकार करता है, और यही मूल्यों पर आधारित जीवन एक संयमित और नियंत्रित समाज व्यवस्था का निर्माण करता है।

वैदिक काल में समाज व्यवस्था और नैतिक जीवन को दृष्टिगत रखते हुए वैदिक तत्व मीमांसा ने उन शिक्षा मूल्यों का विकास किया, जो समाज के लिए हितकारी थे। इन मूल्यों से संकेत मिलता है कि व्यक्ति और समाज के बीच ऐसे तथ्य और सिद्धांत विकसित होंगे, जिनके द्वारा आचाराधिष्ठित जीवन का निर्माण संभव हो सके।

भारतीय दर्शन में आचार के तत्व को लगभग सभी दर्शनकारों ने स्वीकार किया है। आचार व्यक्ति के मन और कर्मों के शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति में सहायक होता है। यही वह मार्ग है जिसके द्वारा तप, संयम और अध्ययन के माध्यम से व्यक्ति अपने जीवन के गंतव्यों को प्राप्त कर सकता है। आचार न केवल नैतिकता

का आधार है, बल्कि यह सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन का मार्गदर्शक भी है।

भारतीय दर्शन में अधिकांश मत आचार और नैतिकता को जीवन का आधार मानते हैं, लेकिन चार्वाक दर्शन इसका अपवाद है। चार्वाक केवल इन्द्रिय सुखों को जीवन का परम लक्ष्य मानता है और 'खाओ-पीओ और मौज करो' जैसी दृष्टि अपनाता है, जबकि नैतिकता और नीति को महत्व नहीं देता।

वेदांत अनुसार कर्म जगत का आवश्यक आधार है। शुभ कर्म करने वाला व्यक्ति उत्तम लोकों को प्राप्त करता है और अशुभ कर्म करने वाला निम्न लोकों में जाता है। यदि शुभ और अशुभ कर्म बराबर हों, तो पुन: जन्म लेना पड़ता है। आचार्य शंकर के अनुसार हमें अपने वर्तमान भाग्य के साथ सामंजस्य स्थापित करना चाहिए, क्योंकि हम अपने कर्मों के लिए स्वयं उत्तरदायी हैं। इस प्रकार, आचार, कर्म और नैतिकता भारतीय दर्शन में व्यक्ति और समाज के जीवन का मूल आधार हैं।

आचार्य शंकर के अनुसार जीवन में कोई भी व्यक्ति अपने नैतिक नियमों से परहेज नहीं कर सकता। ये नैतिक नियम मानव और मानस दोनों के लिए अपरिहार्य हैं और परम तत्व की प्राप्ति के लिए जीवन में नैतिक आचरण आवश्यक है। पाश्चात्य दार्शनिक ब्रैडले ने इसे स्वीकार करते हुए इसे परम सत्ता तक पहुँचने का एक सोपान माना। वेदान्त में उचित कर्म वह है जो सत्य को ग्रहण करता है और अनुचित वह जो असत्य से पूर्ण है। अच्छे कर्म उज्जवल भविष्य की ओर ले जाते हैं, जबकि दुष्कर्म अन्धकारमय और नीच जीवन की ओर अग्रसर करते हैं।

शंकर के दृष्टिकोण में सबसे बड़ी नैतिक उपलब्धि यह है कि व्यक्ति विश्व कल्याण की भावना के साथ स्वयं को परम तत्व के रूप में अनुभव कर सकता है। कर्मसिद्धांत नैतिक न्याय की मांग को भी पूरा करता है। अच्छे कर्म करने वाले को अंतत: उसका फल मिलता है, और दुष्ट कर्मों का परिणाम क्षणिक ही रहता है। प्रोफेसर ह्यूम और अन्य दार्शनिकों ने कर्म के सिद्धांत और उसकी न्यायसंगत व्याख्या की है।

वेदान्त दर्शन आचरण और नैतिक नियमों पर विशेष बल देता है। इसका अध्ययन करने वाला जब प्रमुख आचरण के नियमों का पालन करता है, तब वह ज्ञान के निकट पहुँचता है। आत्मत्याग और आचाराधिष्ठित जीवन से व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार और परम लक्ष्य दोनों की प्राप्ति कर सकता है। वेदान्त का पूर्णतावाद अनुभवातीत और नैतिक आधार पर आधारित है, जो आत्मलाभ और अभ्युदय की दिशा में मार्गदर्शक है।

आचार्य शंकर के अनुसार केवल पूर्णज्ञान, पूर्णआनन्द और पूर्णसत स्वरूप ही स्वत: मूल्यवान है, जिसे नि:श्रेयस कहा गया है। परंतु यह नि:श्रेयस केवल आचाराधिष्ठित अभ्युदय के माध्यम से प्राप्त होता है। भारतीय विद्या और संस्कृति का केन्द्र आचार चिंतन रहा है, जो इसे विश्व में विशिष्ट बनाता है। मनुस्मृति और वेदों में चरित्र और आचार की शुद्धि को सर्वोच्च माना गया है। वेदोत्तर साहित्य, उपनिषद्, स्मृतिग्रन्थ, महाभारत, गीता, योगावशिष्ट, जैन और बौद्ध नीतिशास्त्र, तथा चाणक्यनीति और शुक्रनीति जैसे ग्रन्थ सभी में आचार चिंतन की व्याख्या की गई है। इस प्रकार, आचार और नैतिकता भारतीय संस्कृति और दर्शन का मूल और सर्वोच्च आधार हैं।

रामानुज के अनुसार ध्यान और नैतिक अभ्यास तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक व्यक्ति सभी बुराइयों से नाता नहीं तोड़ लेता। उपनिषद भी यही स्वीकार करती हैं कि आचारहीन होकर कोई जीवन के

लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं कर सकता। ईशोपनिषद में त्याग के साथ उपभोग का महत्व बताया गया है, परंतु इसका अर्थ सामाजिक कर्तव्यों की अवहेलना नहीं है। कर्मकाण्डीय कर्तव्यों से मुक्ति तो संभव है, पर कर्म स्वयं मन पर निर्भर करता है।

उपनिषदों में जीवन को यज्ञ के समान माना गया है, जिसमें तप, दान, साधुता, अहिंसा और सत्यवादिता ही मुख्य दक्षिणा हैं। तैत्तिरीय उपनिषद ब्रह्मचारियों के कर्तव्यों में सत्य, सद्गुण, कल्याण, अभ्युदय, स्वाध्याय और उपदेश का पालन आवश्यक मानती है। आचार संबंधी संदेह होने पर अनुभवी, निष्ठावान और धर्मनिष्ठ ब्राह्मणों का अनुकरण करना चाहिए। सृष्टि के तीन वर्ग—देव, मनुष्य और असुर—को प्रजापति ने तीन मुख्य गुण: तप (आत्मनिर्भय), दान और धैर्य प्रदान किए हैं।

उपनिषदों में यज्ञ का अर्थ केवल आहुति देना नहीं, बल्कि जीवन में नैतिकता और त्याग की भावना के साथ आचाराधिष्ठित मनन माना गया है। यदि साधनों की कमी हो तो भी सत्य और नैतिकता को अर्पित किया जा सकता है। भागवत और आचार्य शंकर के अनुसार केवल ईश्वर की पूजा या देवता की आराधना पर्याप्त नहीं है; व्यक्ति को लोभ, क्रोध और कामवासना से मुक्त होकर दूसरों की देखभाल करनी चाहिए।

तप, संयम, चारित्रिक शुद्धता, मौन और आत्मनिर्भरता मानव को आन्तरिक अभ्यास के माध्यम से इच्छाओं और बाह्य प्रभावों से परे ले जाते हैं। उपवास, ब्रह्मचर्य और आत्मदमन जैसे साधन आचार में पवित्रता लाते हैं। ज्ञान तभी उपयोगी है जब उसे आचरण में उतारा जाए। धर्मसूत्र, धर्मशास्त्र और स्मृतियों में आचार शास्त्र का विवरण मिलता है, जो उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ और सद्गुण-असद्गुण कर्मों की विवेचना करता है। इस प्रकार आचार चिंतन मानव जीवन में नैतिक गुणों—साहस, उदारता, सामाजिक व्यवहार और पारस्परिक संबंधों—का विज्ञान है। 'सदाचार' शब्द इसी मूल से उत्पन्न हुआ है, जो व्यक्ति को नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक दृष्टि से पूर्ण बनाता है।

विवेकपूर्ण जीवन के महत्व को सुकरात ने स्पष्ट किया कि विचारशून्य जीवन जीवनीय नहीं होता। 'नीति मञ्जरी' के अनुसार, कर्तव्य और अकर्तव्य का बोध कराने वाला शास्त्र आचार शास्त्र है। उपनिषदों में इसे 'श्रेय' कहा गया है और मनुस्मृति में नीति शास्त्र को सदाचार का विवेचन माना गया है। वेदों और स्मृतियों के अनुसार आचार ही परम् धर्म है, और द्विज को सतत प्रयत्नशील रहकर सदाचार में लिप्त होना चाहिए।

सदाचार से ही वेदोप्त सुख और आत्मोन्नति संभव है। मुनियों ने भी धर्म को आचरण के माध्यम से ही तपस्याओं का आधार माना। नित्य कल्याणकारी कार्यों में लिप्त होकर, इन्द्रियों पर विजय पाकर, जप, उपासना और अग्निहोत्र करने वाले व्यक्ति का जीवन पतन से सुरक्षित रहता है। मनुस्मृति में इसीलिए सदाचार की सर्वोच्चता और उसकी श्रेष्ठता का विशेष उल्लेख किया गया है। सदाचारी, श्रद्धावान और दोषमुक्त व्यक्ति दीर्घायु, सुख और आनंद का अनुभव करता है।

आचरण वह है जो व्यक्ति के सामाजिक जीवन को सुचारू रूप से चलाए। जन्म और मृत्यु अकेले होते हैं, पर जीवन सामाजिक होता है, और आचार चिंतन इसी सामाजिक जीवन को सही मार्ग पर ले जाने का कार्य करता है। मैकन्जी के अनुसार आचार शास्त्र आचरण के सम्बन्ध में उचित या शुभ कार्य का ज्ञान कराता है, जहाँ 'उचित' का अर्थ नियम के अनुसार और 'अनुचित' का विपरीत होता है।

प्रयोजनवादियों और दार्शनिकों जैसे कान्ट, बटलर, मार्टिनिओ आदि के अनुसार आचार शास्त्र शुभ का विज्ञान है। अन्य विचारक जैसे बेन्थम, मिल आदि इसे मानव जीवन के आदर्श का विज्ञान मानते हैं। डॉ. जे. एन. सिन्हा ने इसे परम शुभ का विज्ञान और जे. एम. सेठ ने जीवन का चरम आदर्श कहा है। अरस्तु के अनुसार आचार शास्त्र मानव जीवन का अन्वेषण करता है। अंग्रेज़ी में इसे 'श्वह्ल्द्धद्बष्ह्य' कहा जाता है, जो जर्मन शब्द 'एथोस' से लिया गया है, अर्थात चरित्र या रूढ़ि। नीति शास्त्र मानव के चरित्र, आदतों और सामाजिक व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है।

मोरल शब्द लेटिन के 'मोर्स' से लिया गया है, जिसका अर्थ रीति-रिवाज या आदर्श है। मैकन्जी के अनुसार आचार शास्त्र आचरण में उचित और शुभ का अध्ययन है, जहाँ 'उचित' का अर्थ नियम के अनुसार होना है। भारतीय संदर्भ में आचार शास्त्र वस्तुत: आचरण की कला है, जिसका उद्देश्य जीवन को परिष्कृत और आनंदमय बनाना है, जैसा कि हितोपदेश और नीति शतक में बताया गया है।

भारतीय और पश्चिमी दृष्टिकोण को मिलाकर देखा जाए तो आचार चिन्तन एक साथ विज्ञान और कला दोनों के रूप में समझा जा सकता है। ऋग्वेद में आचार शास्त्र को 'ऋत' और 'सत' के मिश्रण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आचार वही है जो शाश्वत नैतिक नियमों के अनुसार हो और जो व्यक्ति ऋत् और सत् को स्वीकार नहीं करता, वह अपने आचरण को परिष्कृत नहीं कर सकता। इस प्रकार, आचार शास्त्र नैतिकता, नियम और जीवन की परिपूर्णता का समन्वय प्रस्तुत करता है।

भारतीय परंपराओं में आचार को धर्म का पर्याय माना गया है, अत: आचार चिन्तन को जीवन जीने की कला कहा जा सकता है। यह आचार के प्रत्येक पहलू और सद्विचार की भावना को व्यक्त करता है। तैत्तिरीय उपनिषद में आचार चिन्तन का उल्लेख गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने वाले छात्रों के उपदेश के माध्यम से किया गया है, जहाँ शिक्षा के समापन के बाद गृहस्थ जीवन में जिम्मेदारियाँ, कर्तव्य और सामाजिक द्वंद्वों का सामना करना पड़ता है।

इस स्थिति में आचार चिन्तन जाग्रत होता है और केवल आचार्य मार्गदर्शन देकर सही आचरण दिखाता है। समावर्तन संस्कार के उपदेश यह स्पष्ट करते हैं कि आर्यों ने आचार को जीवन में सर्वोच्च स्थान दिया और आचार के माध्यम से अपने गुण और पवित्र भावनाओं का विकास किया। आचार चिन्तन व्यक्ति को आचारमय बनने का मार्ग दिखाता है, जहाँ ऋत् और सत्य के अनुसार जीवन में आचरण की सिद्धि होती है और यह विभिन्न कर्मों के माध्यम से प्रकट होता है।

मानव जीवन का मूल्य आचरण और बुद्धि के सामंजस्य में निहित है। श्रेष्ठ आचार और सदाचार ही व्यक्ति को पशुओं से अलग करते हैं और श्रेष्ठ पुरुषों की पहचान कराते हैं। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार व्यक्ति और राष्ट्र तब सुखी हो सकते हैं जब शरीर, मस्तिष्क और आत्मा सामंजस्य में हों। आज मस्तिष्क की उपलब्धियों पर अधिक निर्भरता और आध्यात्मिक मूल्यों की उपेक्षा के कारण दुख और असंतुलन बढ़ा है।

आचार चिन्तन इस स्थिति का समाधान प्रस्तुत करता है। यह मानव को जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में उचित आचरण अपनाने, कर्तव्य और अकर्तव्य की पहचान करने और सत्य के मार्ग की ओर बढ़ने का मार्ग दिखाता है। भारतीय परंपरा में आचार का मूल उद्देश्य यही था कि व्यक्ति धर्म और सदाचार के माध्यम

से जीवन का सर्वोत्तम विकास करे। यदि आचार चिन्तन मानव से सम्बंधित न हो, तो धर्मानुरागी आचरण और धार्मिक चेतना की प्राप्ति संभव नहीं है।

पशुओं में भी सहज नैतिक व्यवहार के लक्षण पाए जाते हैं, जैसे अपने समूह का पालन करना या सुरक्षा सुनिश्चित करना। मानव में आचरण की चेतना आदिम काल से है, जो अनुभव और शिक्षा के माध्यम से विकसित होती है। नैतिक चेतना और आचरण साथ-साथ बढ़ते हैं, और नैतिक निर्णय की भावना स्वत: नहीं उत्पन्न होती। इसी कारण आचार और नीति का विकास आवश्यक है।

भारतीय संदर्भ में नीति शास्त्र या आचार चिन्तन मानव के व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण का अध्ययन है। यह देश की संस्कृति, परंपरा और आध्यात्मिक दृष्टिकोण को परिभाषित करता है। भारत में आचार शास्त्र तत्व शास्त्र और अध्यात्म विद्या का अविभाज्य अंग है। वेद पवित्र हैं, पर आचारहीन व्यक्ति उनके अधिकारी नहीं बन सकते। भारतीय आचार चिन्तन जीवन में परम् शुभ और मानव जीवन के सर्वोत्तम लक्ष्य को स्पष्ट करता है।

गौतम बुद्ध के अनुसार, सभी सुगंधों में सदाचार की सुगंध सर्वोत्तम है। जीवन में शिष्टाचार अच्छे आचार का आधार है। शिष्टाचार और आचरण में समानता होने के बावजूद, सदाचारी होने के लिए शिष्टाचारी होना भी आवश्यक है। आचार का अर्थ है, वह आचरण जिसे किया जाए। आचार पद्धति समाज, संस्कृति और सभ्यता के संरक्षण के लिए आवश्यक है और इसे परम धर्म माना गया है। भारतीय संस्कृति ने इसे मानव कल्याण और श्रेष्ठ जीवन के उद्देश्य से सर्वोच्च महत्व दिया है। मनु ने भी आचार चिन्तन को परम धर्म मानकर हमेशा इसके पालन का आदेश दिया है।

श्रुति और स्मृति के अनुसार आचार ही परम धर्म है। आत्मवान ब्राह्मण को आचार पालन में सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए, क्योंकि आचारवान ही सम्पूर्ण वेदफल का अधिकारी होता है। गुरुनानक ने सत्य से भी उच्च आचार को श्रेष्ठ माना, और महर्षि दयानन्द ने सज्जनों को परोपकार, प्रेम और अन्य दोषों का परित्याग कर सदाचार अपनाने का मार्ग सुझाया। भारतीय संस्कृति मानव को मानवीय गुणों से सम्पन्न कर अविवेकी आचार से दूर करती है। शिष्टाचार और सदाचार का मूल शील है। शीलवान व्यक्ति अपने व्यवहार से दूसरों पर प्रभाव डालता है; विनय, संस्कार और दान इसी शील का अंग हैं। भृर्तहरि और चाणक्य ने शील को परम भूषण माना, क्योंकि शील से ही आचार का विकास होता है और कुलीन व्यक्ति का मूल्यांकन उसके आचार से होता है।

भारतीय आचार चिन्तन कर्म और पुनर्जन्म की मान्यताओं को मानता है। जन्म से मृत्यु तक मानव को अपने शुभ-अशुभ कर्मों का फल भोगना पड़ता है और इन कर्मों की समाप्ति पर ही मोक्ष संभव है। व्यक्ति को कर्म करना चाहिए पर कर्मफल के प्रति आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। कर्मफल और भाग्य की धारणा से पुनर्जन्म की अवधारणा भी जुड़ी है। भारतीय आचार चिन्तन सामाजिक जीवन के नियम निर्धारित करता है और लोक व्यवहार को नियंत्रित करता है। यह शताब्दियों के ऋषि-मुनियों के चिन्तन का परिणाम है और विश्व में अद्वितीय स्थान रखता है।

निष्कर्षत: भारतीय आचार चिन्तन जीवन का मूल आधार और परम धर्म है। यह केवल बाह्य आचरण तक सीमित नहीं है, बल्कि नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन का मार्गदर्शन करता है। आचार का

पालन व्यक्ति को उसके कर्मों के प्रति उत्तरदायी बनाता है और उसे श्रेष्ठता, शील, विनय तथा परोपकार की ओर उन्मुख करता है। वेदांत और उपनिषदों के अनुसार शुभ कर्म और त्याग मोक्ष की दिशा में ले जाते हैं। आचार सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन दोनों में आवश्यक है; यह जन्म और मृत्यु के बीच जीवन को अनुशासित करता है। नैतिक चेतना और आचार का विकास शिक्षा और अनुभव से होता है। पशु भी स्वाभाविक नैतिक क्रियाएँ करते हैं, लेकिन मनुष्य विवेक और सोच के साथ नैतिक निर्णय करता है। आचारहीन विद्या पवित्र नहीं बनती; केवल आचारवान व्यक्ति ही वास्तविक ज्ञान और मोक्ष का अधिकारी होता है। भारतीय आचार चिन्तन कर्म, भाग्य और पुनर्जन्म की मान्यताओं को स्वीकार करता है और जीवन को सत्कार्य, कल्याण तथा मोक्ष की दिशा में ले जाता है। इस प्रकार यह मानव जीवन को नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक दृष्टि से सुव्यवस्थित करता है और व्यक्ति तथा समाज के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *शुक्रनीति (1/56) चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1961, तथा कामंदकीय नीतिशास्त्र (1/15) चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1977*
2. *वैशेषिक दर्शन (1/1) - विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली, 1971*
3. *डॉ. बद्रीनाथ सिंह, नीतिशास्त्र की रूपरेखा, आशा प्रकाशन वाराणसी, 1997*
4. *J.S. Mackenzie, A Manual of Ethics, University Tutorial Press Ltd; London, 1941*
5. *मोहन लाल महतो वियोगी, आर्य जीवन दर्शन, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, सम्मेलन भवन, पटना-3, 1971*
6. *मनुस्मृति - कुल्लूक भट्ट की टीका सहित (4/155), निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1946, मेधातिथि की टीका के साथ, कलकत्ता, 1932*
7. *शांकरभाष्य (7/40/1) - निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, द्वितीय संस्करण, 1927*
8. *मुण्डकोपनिषद् (3/2/4) - गीता प्रेस, गोरखपुर, वि. स. 2012*
9. *ब्रह्मसूत्र - शांकर भाष्य (4/1/13), निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1927, रामानुज भाष्य - गवर्मेन्ट सेंट्रल प्रेस, बम्बई, 1914, कठोपनिषद् (1/2-3) - निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930, तथा उपनिषदों की भूमिका' - डॉ. राधाकृष्णन, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1963*
10. *यशदेव शल्य, संस्कृति मानव कृतृत्व की व्याख्या, सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, 1969*
11. *सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायायन अज्ञेय, भारतीय जन-जीवन, खंड 1*
12. *डॉ. राधाकृष्णन, धर्म और समाज, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1963*
13. *हेनरी बर्गसाँ टू सोर्सेज एण्ड विलिजन मोरेलिटी*
14. *तैतरीय उपनिषद - शांकर भाष्य (2/1), आन्नदाश्रम संस्कृत सीरीज, पूना, 1929, तथा शांकर भाष्य ब्रह्मसूत्र (1/1/1) निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1927*

15. शांकरभाष्य, केनोपनिषद (3/2) - निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930

16. शांकरभाष्य गीता (4 / 19, 23) - शांकर भाष्य और गोयन्दका द्वारा उसका हिन्दी अनुवाद, चौथा संस्करण, 1995 (वि.) गीता प्रेस, गोरखपुर, शांकर भाष्य ब्रह्मसूत्र (3/2/25) - निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, द्वितीय संस्करण, 1927

17. कामसूत्र (1/2/48)

18. डॉ. अर्जुन मिश्र, भारतीय दर्शन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, संवत - 2018

19. शांकरभाष्य गीता (3/13) - शांकर भाष्य और गोयन्दका द्वारा उसका हिन्दी अनुवाद, चौथा हिन्दी अनुवाद, चौथा संस्करण, 1995 (वि.) गीता प्रेस, गोरखपुर

20. शांकर भाष्य कठोपनिषद् (377) - निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930

21. अपरोक्षानुभूति (89), अच्युत ग्रंथमाला कार्यालय काशी, प्र.सं. 1990

22. सिंह एवं सिंह, भारतीय दर्शन, ज्ञानदा प्रकाशन, 24- दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली, 1941

23. *Jadunath Sinha, A Manual of Ethics, New Central Book Agency (P) Ltd; 8/1 Chintamani das lane, Calcutta, 1984, & The Theory of Good and Evil Hastings Rushall, Second Ed. Vol, I & II O&ford University Press London, 1924*

24. *An Out line of the Philosophy of the Upnishads - O&ford University Press, 1931*

25. *The Ethics of the Hindus - S.K. Maitra, Calcutta University Press, Calcutta, 1927*

26. ब्रह्मसूत्र (4/3/13) पर रामानुज का भाष्य - गवर्मेन्ट सेंट्रल प्रेस, बम्बई, 1914 तथा डॉ. राधाकृष्णन, उपनिषदों की भूमिका, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1963

27. ईशोपनिषद् (1), निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930 29. छांदोपनिषद (3/17), निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930

28. वृहदारण्यक उपनिषद (5/2), निर्णय सागर संस्करण, बम्बई, 1930 एवं गीता प्रेस, गोरखपुर वि. सं. 2012

29. डॉ. राधाकृष्णन्, उपनिषदों की भूमिका, पाद टिप्पणी- डॉ. राधाकृष्णन, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1963

30. ब्रह्म पुराण आनन्दाश्रम संस्करण (235/40-42), पूना, 1895 गायकवाड़ ओरिएंटल सीरीज, बड़ौदा, 1941

31. ए. वेबर, शतपथब्राह्मण- लन्दन 1885, डॉ. रत्न कुमारी पब्लिकेशन सीरीज न. 1, हिन्दी अनुवाद, डॉ. गंगा प्रसाद, उपाध्याय भाग 1,2, व 3 दिल्ली, 1967, 69, 70 (11/3/12)

33. डॉ. राधाकृष्णन, उपनिषदों की भूमिका, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1963

34. कालिक पुराण, अध्याय-83

35. मनुस्मृति - कुल्लूक भट्ट की टीका सहित (1/108), निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1946, मेधातिथि की टीका के साथ, कलकत्ता, 1932

36. मनुस्मृति - कुल्लूक भट्ट की टीका सहित (1/110), निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1946, मेधातिथि की टीका के साथ, कलकत्ता, 1932

37. शुक्रनीति (1/2) चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1961

38. *Jadunath Sinha, A Manual of Ethics, New Central Book Agency (P) Ltd; 8/1 Chintamani Das Lane, Calcutta, 1984*

39. ऋग्वेद (4/23/8) तथा (4/23/9) – वैदिक पुस्तकालय अजमेर, 1985

40. ऋग्वेद (4/28/8–9) – वैदिक पुस्तकालय अजमेर, 1985

41. तैत्तरीय उपनिषद् – शांकरभाष्य (1/11/1, 2, 3, 4, 5), आन्नदाश्रम संस्कृत सीरीज, पूना, 1929.

42. मोहन लाल महतो वियोगी, आर्य जीवन दर्शन, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, सम्मेलन भवन, पटना–3, 1971

43. डॉ. राधाकृष्णन, ईस्ट एण्ड वेस्ट सम रिफलेक्शन्स

44. यशदेव शल्य, संस्कृति मानव कृतृत्व की व्याख्या, सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, 1969, यशदेव शल्य

45. नीति शास्त्र की भूमिका, मिश्र एवं अवस्थी, किताब घर, आचार्य नगर, कानपुर, 1981

46. त्रिवल्लुर अध्याय–14, श्लोक – 4, वर वाणी, ट्रस्ट, वाराणसी द्वारा प्रकाशित

47. भारतीय संस्कृति के मूलतत्व, सोनी विरेन्द्र, राजपाल प्रकाशन, नई दिल्ली

48. पी. सी. राय, महाभारत शान्तिपर्व (124/66), कलकत्ता, 1881–82, स्वाध्याय मण्डल संस्करण तथा कुम्भकोणम् संस्करण, पूजा, 1929–33 गीता प्रेस, गोरखपुर, वि. सं. 2012

49. भर्तृहरि, भर्तृहरि नीति शतक्म श्लोक – 78, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1969

50. चाणक्य नीति (5/2) – चाणक्य, चौखम्बा, वाराणसी, 1967

51. गीता (12/26) – गीताप्रेस गोरखपुर, चौथा संस्करण, 1995